बाल-कहानियाँ

नीयत का फल

माइल ख़ैराबादी

विषय सूची

पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया–

"माँ-बाप की तरफ़ से अपने बच्चों को
दिया गया सबसे बेहतरीन तोहफ़ा
उनकी अच्छी तरबियत है।"

(हदीस)

जो माँ-बाप और सरपरस्त शुरू ही से बच्चों को
अच्छी बातें नहीं सिखाते और न ही उन्हें
ऐसी किताबें पढ़ने पर उभारते हैं
जो उनके अन्दर अच्छे आदाब और सलीक़ा
पैदा करें, उन्हें पछतावे के सिवा
कुछ नहीं मिलता।

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम
'अल्लाह के नाम से जो बड़ा मेहरबान, निहायत रहमवाला है।'

दो लफ़्ज़

बच्चे हमारा भविष्य उसी वक़्त हो सकते हैं जबकि हम उनकी तालीम और तरबियत पर संजीदगी के साथ ध्यान दें। इसके लिए ज़रूरी है कि हम उनको वे किताबें और लेटरेचर मुहैया कराएँ जो इस्लामी अक़ीदे और अख़लाक़ को सामने रखकर लिखी गई हों। इस्लाम में अमल का दारोमदार नियत पर है। कोई आदमी कितना ही अच्छा काम करे लेकिन उसके काम में ख़ुदा की ख़ुशी के बजाए दिखावा हो तो उस काम की ख़ुदा की नज़र में कोई अहमियत नहीं।

यह किताब "नीयत का फल" जो इस समय आपके हाथों में है इसमें "माइल ख़ैराबादी" साहब ने इसी चीज़ को बच्चों के दिल और दिमाग़ में बैठाने की एक कामयाब कोशिश की है। इस्लाम में ख़ुदा के हुक़ूक़ के बाद माँ-बाप का हक़ है, किताब की पहली कहानी "दूध का पूत" है, जिसमें माँ की ममता और औलाद की बेपनाह मुहब्बत को पेश किया गया है।

इनसान को जो भी नेमतें इस दुनिया में मिली हुई हैं वे ख़ुदा ही की दी हुई हैं। इन नेमतों में एक अहम और बड़ी नेमत माल-दौलत भी है। इस किताब की दूसरी कहानी "नीयत का फल" में इसको इस्तेमाल करने और ख़ुदा को ख़ुश करने की तरकीब से बच्चों को वाक़िफ़ कराया गया है।

इल्म हासिल करना हर मुसलमान मर्द और औरत पर फ़र्ज़ है। समाज के बच्चों में फैली हुई जिहालत को सिद्दीक़ी साहब मानव सेवा समझकर कैसे दूर करते हैं "अच्छे बच्चों का स्कूल" नामक कहानी से साफ़ पता चलता है।

इस किताब की चौथी और सबसे अहम कहानी "भूत और चुड़ैल" की हक़ीक़त

पर लिखी गई है। अधिकतर लोग चाहे कोई छोटा हो या बड़ा किसी-न-किसी शक्ल में इस बदएतक़ादी से मुतास्सिर है। अक़ीदे की दुरुस्तगी के लिए ज़रूरी है कि हर छोटा-बड़ा इस कहानी से सबक़ हासिल करे, क्योंकि ख़ालिस तौहीद के बग़ैर दीन-ए-इस्लाम पर अमल अधूरा है।

इस किताब को पढ़ते समय यह बात पाठकों के सामने रहनी चाहिए कि यह किताब तक़रीबन पच्चीस साल पहले लिखी गई थी। चुनाँचे इस किताब में कई बातें उसी ज़माने के माहौल में लिखी गई हैं। अलबत्ता बच्चों की दिलचस्पी को देखते हुए इस किताब में तस्वीरें दे दी गई हैं। हमें उम्मीद है कि यह किताब बच्चों को पसन्द आएगी और उनके ज़ीवन में अच्छी तब्दीली पैदा होगी।

—नसीम ग़ाज़ी फ़लाही
सेक्रेट्री
इस्लामी साहित्य ट्रस्ट
(दिल्ली)

दूध का पूत

क़ादिर ग्वालपाड़ा में बीवी को भी ले आया। उसका ख़याल था कि यहाँ मज़दूरी अच्छी है। जमकर कुछ दिन रहेगा, डटकर काम करेगा। कमाई दो जगह ख़र्च होने के बदले एक जगह होगी तो बरकत रहेगी। इस तरह चार-पाँच साल में इतना बचा लेगा कि फिर वतन जाकर कोई छोटी-सी दुकान कर लेगा और फिर रोज़-रोज़ की मज़दूरी के चक्कर से बच जाएगा। वह कहा करता था कि मज़दूरी करके कमाना और खाना ऐसा है जैसे रोज़ एक नया कुआँ खोदना और पानी पीना।

बीवी को ले आने से क़ादिर को एक फ़ायदा यह हुआ कि वह जो अपने हाथ से अपना खाना तैयार करता था और उसमें उसके कई घंटे निकल जाते थे, वे बच गए। उन घंटों को भी उसने काम में लगाया। वह बड़ी मेहनत से किसी दिन नाग़ा किए बग़ैर काम कर रहा था। उसकी आमदनी भी इतनी हो जाती थी कि वह खा-पीकर उतना बचा लेता था, जितना उसने सोच रखा था। यह सब तो ठीक है लेकिन वह जो किसी ने कहा है—

"अगर इनसान के सोचे हुए सारे काम बनने लगें तो फिर वह इनसान न रहे ख़ुदा बन बैठे।" और इससे ज़्यादा सच्ची बात यह है कि वही होता है, जो मंज़ूरे-ख़ुदा होता है।

तो वही हुआ जो ख़ुदा को मंज़ूर था।

क़ादिर को ग्वालपाड़ा आए दूसरा ही साल था कि उसके घर में बच्चे की पैदाईश हुई। ख़ुदा की मरज़ी, बच्चा पैदा होने के दो घंटे बाद ही ज़च्चा (माँ) को ज़हरबाद

हो गया और वह देखते-ही-देखते चल बसी। अब बच्चे को कैसे पाला जाए? क़ादिर इस मामले में बिलकुल अनाड़ी था। कोई बूढ़ी औरत साथ न थी, जो उस वक़्त काम आती। वह सोच में पड़ गया। बच्चा बराबर रोए जा रहा था। क़ादिर की समझ में ही न आया कि उसे किस तरह चुप कराए। ग़रीब, मजबूर और बेबस जब कुछ न सोच सका तो ख़ुद भी रोने लगा। उसके यार-दोस्तों में से जिन लोगों ने सुना, वे उसके घर आए। सब ने उसे सब्र की नसीहत की लेकिन उस नसीहत से काम न बना, उसे तो ज़रूरत थी किसी ऐसे की जो फ़ौरन आकर उसके बच्चे की जान बचा ले।

क़ादिर के पड़ोस में गुलाब घोसी का घर था। ख़ुदा की क़ुदरत कि अल्लाह ने उसकी बीवी की भी गोद भरी थी। जिस वक़्त गुलाब घोसी अपने बच्चे की छटी के लिए कहीं न्योता देने गया था, दीवार पीछे ज़च्चा के कानों में क़ादिर के रोने की आवाज़ पहुँची। वह हाल तो सुन ही चुकी थी, फिर छः दिन का उसका भी बच्चा। उसने अपने बच्चे की तरफ़ देखा, "अगर अल्लाह न करे मैं मर जाऊँ तो इसका क्या होगा?" एक बुरा ख़याल उसे आया। उसने बच्चे को उठाकर सीने से लगा लिया और उसे चूमने लगी। दीवार के पीछे दो-तीन घंटे की उम्रवाले बच्चे की रोने की आवाज़ बराबर उसके कानों से टकराए जा रही थी। उसके कान उसी तरफ़ थे और नज़रें अपने मकान के दरवाज़े की तरफ़।

अस्र के वक़्त दाई उसे तेल मलने आई तो बोली, "रामदई! तुम जाकर क़ादिर भाई से कहो, घबराएँ नहीं, उस बच्चे को पालना और उसकी देखभाल करना सब मेरे ज़िम्मे। यह कहकर किसी तरह बच्चे को ले आओ और मेरे बच्चे के पास लिटा दो। मैं समझूँगी कि अल्लाह ने मुझे दो बच्चे दिए।"

दाई उस रहमदिल ज़च्चा का मुँह तकने लगी फिर उसके ज़बान से यह दुआ फूट पड़ी, भगवान तुझे भाग्यवान करे, तू दूधों नहाए पूतों फले और फिर कुछ और कहे बग़ैर वह उलटे पाँव फिरी, क़ादिर के घर गई। अन्धा क्या चाहे, दो आखें। क़ादिर

फ़ौरन राज़ी हो गया। रामदई ने बच्चे को गोद में उठा लिया और ले जाकर घोसन के बच्चे के बराबर लिटा दिया। बच्चा अभी तक रोए जा रहा था। घोसन ने घुट्टी की शीशी उसके मुँह में लगा दी। बच्चा झट मुँह मारने लगा और थोड़ी देर बाद सो गया।

घोसन के इस एहसान को क़ादिर ने दिल व ज़बान से माना। वह ज़बान से अपने पराए हर एक से घोसन की तारीफ़ करता। यह कहता कि "देखिए! ग्वालपाड़ा में कितने ही हिन्दू-मुसलमान, अमीर-ग़रीब रहते हैं, लेकिन किसी ने मेरा दुख न जाना, ज़बानी हमदर्दी तो सबने की लेकिन यह हिम्मत किसी को न हुई जो पड़ोसी बहन ने कर दिखाई।" फिर वह साल भर पहले की एक बात सुनाकर कहता, "ख़ुदा के भेद उसके सिवा कोई दूसरा नहीं जान सकता। मैं जब ग्वालपाड़ा में आया तो मेरी कोशिश यह थी कि बड़े लोगों के पड़ोस में रहूँ-सहूँ। मैंने पहली कोशिश यह की कि मिर्ज़ा साहब अपने अहाते में ज़रा-सी जगह दे देते, लेकिन मुझे वहाँ नाकामी हुई, फिर मैंने ठाकुर बलदेव सहाय की ख़ुशामद की। वहाँ से भी टका-सा जवाब मिला। अगर आज मुझे उन बड़ों में से किसी का पड़ोस नसीब होता तो मुझे यह बहन न मिलती, जिसने मेरे बच्चे को अपने सीने से लगा लिया।"

ये बातें क़ादिर ज़बान से कहता। शुक्रिया अदा करने का दूसरा रुख़ उसने यह इख़्तियार किया कि जब गुलाब घोसी न्योते देकर वापस आया तो क़ादिर ने अपनी सारी पूँजी उसके क़दमों पर ले जाकर डाल दी। गुलाब घोसी ने अपनी घोसन की तरफ़ देखा और बड़े तीखेपन से बोला, "अरे देख रही हो! ये देखो, सौदा तो अच्छा रहा। बच्चा पालने की मज़दूरी तुम्हें कितनी ज़्यादा मिल गई।"

गुलाब घोसी का यह तंज़ क़ादिर समझ गया। उधर घोसन ने कहा, "क़ादिर भाई! अगर आप मुझे कोई नर्स या दायी समझते हैं तो ले जाएँ अपने बच्चे को, मैं कोई मज़दूरनी नहीं हूँ। मैंने तो अल्लाह के लिए यह किया। अल्लाह ख़ुद मुझे बदला देगा। अल्लाह से बढ़कर देनेवाला कौन है?"

क़ादिर दोनों की बातें सुनकर लाजवाब रह गया। वह चुपके से चला आया, "अल्लाहु-अकबर, ऐसे भी लोग आजकल हैं। हैं तो ग़रीब, लेकिन अल्लाह के नाम पर दिल ग़नी है उनका। वाह रे गुदड़ी के लाल!" क़ादिर दिन-रात यही दिल-ही-दिल में कहता और सोचता कि इस एहसान का बदला कैसे चुकाया जाए।

दिन जाते समय नहीं लगता। दिन से महीने, महीने से साल, फिर साल पर साल गुज़रने लगे। क़ादिर का बच्चा नादिर अब पैरों चलने लगा। कुछ खाने- पीने लगा, फिर बोलने लगा और इस तरह पाँच साल बीत गए।

यही वे पाँच साल थे जिनमें क़ादिर ने जुटकर काम किया और जी भरके कमाया। उसके बाद गुलाब घोसी और अपनी बहन घोसन से जाने की इजाज़त चाही। जाने के लिए उसने सबसे बड़ी दलील यह दी कि वह बच्चे को पढ़ाएगा। ग्वालपाड़ा में पढ़ाई का बन्दोबस्त नहीं है।

गुलाब घोसी ने तो ज़्यादा मुहब्बत नहीं दिखाई, हाँ जब घोसन के सामने पहली बार क़ादिर ने जाने की बात छेड़ी तो वह और तो कुछ न कह सकी, नादिर को पास बुलाकर सीने से चिमटा लिया और रोने लगी। क़ादिर चुप हो गया। दस-पन्द्रह दिनों के बाद फिर कहा तो फिर यही कैफ़ियत हुई, लेकिन कब तक? आख़िर घोसन भी मजबूर हो गई और वह दिन भी आ गया जब क़ादिर अपने बच्चे को घर ले जा रहा था और देखकर घोसन तड़प-तड़पकर रो रही थी और ग्वालपाड़ा के लोग कह रहे थे, "यह देखो दूध के पूत की मुहब्बत!"

सोचे-समझे मन्सूबे के तहत क़ादिर अपनी धुन में वतन चला तो आया मगर कोसों दूर पहुँचकर जब उसने अपने घर में क़दम रखा तो दस-पाँच दिन तो लोगों ने बड़ी मुहब्बत जताई लेकिन फिर सब अपने-अपने धंधों में लग गए। अब क़ादिर को एसा लगा जैसे वह ग्वालपाड़ा में दुनिया की सबसे बड़ी नेमत छोड़ आया, जो फिर नहीं मिल सकती। उसने कुछ दिन के बाद नादिर को पढ़ने बैठा दिया और ख़ुद एक छोटी-सी दुकान लेकर बैठ गया। नादिर जब पढ़कर आता तो बाप के पास बैठा
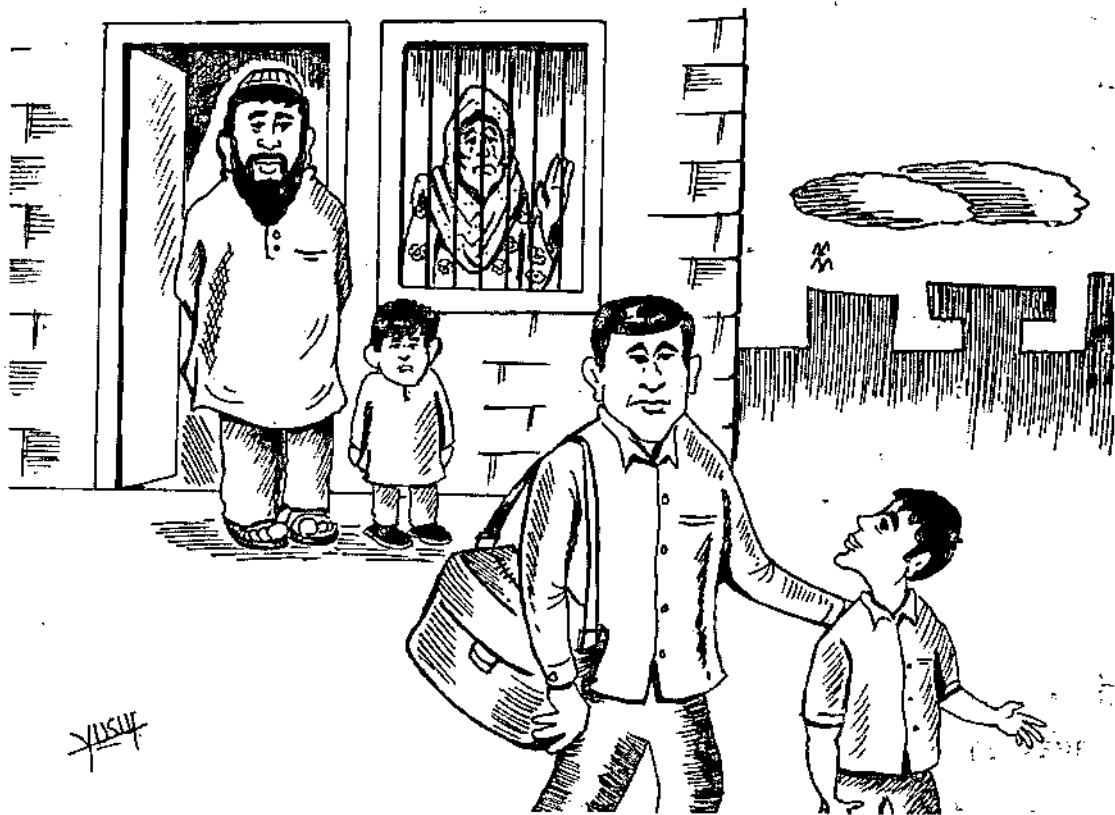
रहता और कभी वह ग्वालपाड़ा की बातें भोलेपन के साथ करता और कभी क़ादिर उससे रो-रोकर कहता, "बेटा! तेरी माँ तो तेरे पैदा होते ही मर गई और मैं तो बस तुझे पैदा करने भर का ही हूँ, सचमुच तेरे माँ-बाप तो ग्वालपाड़ा में हैं। देख, तू कभी भूलकर भी उन्हें न भूलना। उन्होंने हमारे साथ वह कुछ किया, जो दूसरे लोग सोच भी नहीं सकते। देख बेटा! बड़े होकर भी उन्हें न भूलना। जब बेटों का बाप बनना, तब भी न भूलना, अपने बाल-बच्चों को उन नेक लोगों की कहानी सुनाना। देख तो! तेरी ग्वालपाड़ा वाली माँ की ममता, वह तुझको पहले दूध पिलाती, फिर अपने बच्चे को। क्या तू किसी के साथ ऐसा कर सकेगा? बेटा! इनसानियत यही है। तू भी ऐसा ही करना। उसके दूध की लाज रख लेना, जिसने यह कुरबानी कर दिखाई। और सुन! मैंने बार-बार चाहा कि किसी बहाने इस एहसान के बदले भरपूर रक़म तेरे उन

दोनों माँ-बाप को दूँ लेकिन उन्होंने हमेशा मेरी बात ठुकरा दी। हाँ बेटा! उन्होंने पाँच साल यह ख़िदमत की और एक पैसा भी न लिया। याद रहे मेरे बेटे नादिर! वह दिन जब मैं तुझे लेकर ग्वालपाड़ा से चला था, आह! कैसे रो रही थी तेरी वह माँ और कैसा बेचैन था तेरा वह बाप जो कोसों दूर हमसे छूट गए। ख़ुदा ही जानता है कि तेरी मोहब्बत में उनका वहाँ क्या हाल हो?"

इस तरह क़ादिर यहाँ आए दिन नादिर से कहता और नादिर सुनता। बचपन में तो उसकी समझ में ज़्यादा न आया कि बाप क्या नसीहत कर रहा है। लेकिन जैसे-जैसे उसकी आँख खुलती गई, उसे कुछ-कुछ दिखाई देने लगा कि दुनिया क्या है, दुनिया में क्या हो रहा है और फिर एक पराए शख़्स ने कोसों दूर एक परदेसी के साथ क्या किया? अब नादिर भी कुछ सोच में रहा करता।

वहाँ ग्वालपाड़ा का हाल सुनिए। क़ादिर को वहाँ से आए हुए बीस बरस हो गए लेकिन इन बीस बरसों में कोई घड़ी भी ऐसी न गुज़री होगी जब ग्वालपाड़ा वाली माँ ने नादिर को याद न किया हो। वह पहले तो याद करके रोती रही, फिर जब उसकी आँखों में आँसू न रहे तो उसे चुप लग गई। चुप रहने के बाद उसकी अजीब आदत पड़ गई। अपने जिस दूध से वह नादिर को अपना ख़ून पिलाती थी, अकसर उसपर हाथ रखे रहती और आह-आह करती रहती। पहले तो गुलाब घोसी को ज़्यादा ख़याल न हुआ लेकिन जब उसने हर वक़्त उसी जगह हाथ रखे देखा तो हाल पूछा। बताया, न जाने क्या हो गया है, इस जगह दर्द-सा होता रहता है जैसे अन्दर-ही-अन्दर कुछ पक रहा है, गरम-गरम लपक-सी होती है।

"कभी देखा भी तूने क्या है?" गुलाब घोसी ने पूछा।

"न, देखा तो नहीं।" घोसन ने जवाब दिया।

"अरे देख तो?"

शौहर के कहने पर घोसन ने छाती देखी, उसका वह दूध सुर्ख़ हो रहा था। उसने

गुलाब को दिखाया।

"अरे यह तो पक रहा है री!"

और यह कहकर वह भागम-भाग अब्दुर्रहमान जर्राह को बुला लाया। जर्राह ने देखा तो उसने कानों पर हाथ रखे और बोला, "भाई। यह औंधा घाव है और इसका मुँह दिल की तरफ़ है। अगर ऊपर होता तो मैं ऑपरेशन कर देता। अब आप इसे लेकर किसी बड़े शहर जाएँ, वहाँ ऑपरेशन हो सकता है या कुछ ऐसे इंजेक्शन लग सकते हैं जिससे घाव ठीक हो सकता है वरना अब ज़्यादा देर नहीं है। जल्दी फ़िक्र कर लो भाई!"

गुलाब घोसी को अपनी घोसन से बड़ी मुहब्बत थी। अब्दुर्रहमान जर्राह से यह सुना तो वह घबरा गया। उसी वक़्त बड़े लड़के को बुलाया। घर-बार, खेती-बाड़ी और जानवर उसे सौंपे, ऊँच-नीच समझाया, फिर बचा-खुचा पैसा निकाला। कुछ ख़र्च के लिए घर में दिया, बाक़ी एक हज़ार के क़रीब रुपये लेकर ग्वालपाड़ा से निकला और किसी बड़े शहर की नीयत करके चल दिया। जब वह ट्रेन में सफ़र कर रहा था तो कई लोगों ने उसे राय दी कि बरेली के सदर अस्पताल में दिखाओ। वह सीधा बरेली ही पहुँचा और बीवी को सदर अस्पताल में दाख़िल कर दिया।

दो-तीन दिन की देखभाल के बाद डॉक्टर ने गुलाब घोसी को बताया कि तुम्हारी घोसन के बदन में ख़ून बिलकुल नहीं रह गया है। ऐसी हालत में ऑपरेशन नहीं किया जा सकता। उसके बदन में दो बोतल ख़ून दाख़िल करने के बाद ही ऑपरेशन किया जा सकता है।

"तो बाबू करो। मुझसे क्या कहते हो?" गुलाब घोसी की ज़बान से निकला।

"लेकिन ख़ून तो तुम्हें देना होगा।"

"लो डॉक्टर बाबू! जितना ख़ून मेरे बदन में है, निकाल लो।" और गुलाब घोसी अपनी बाँह आगे फैलाकर बैठ गया।

"तुम बूढ़े आदमी हो। पहले तो तुम्हारे बदन में इतना ख़ून है ही नहीं, दूसरे यह कि ख़ून किसी नौजवान का होना चाहिए और वह भी ऐसा जो तुम्हारी घोसन के ख़ून से मेल खा जाए।"

"तो बाबू! मैं क्या करूँ? तुम ही ग़रीब पर रहम करो। पैसे मैं दे सकता हूँ।"

"अच्छा! अब तुम्हारी ग्वालन से दो बातें पूछ लूँ।"

"देखो तो माई! कब से यह तकलीफ़ है तुमको?"

"मेरे लाल! यह तकलीफ़ तो बीस बरस से है मुझे।"

"बीस बरस से!" डॉक्टर, नर्स और पास खड़े हुए कम्पाउन्डर सभी चौंक पड़े। डॉक्टर ने पूछा, "तो कैसे यह तकलीफ़ शुरू हुई, माई?"

"क्या बताऊँ बेटा। तुम सब मेरी हँसी उड़ाओगे, तुम्हें यक़ीन न आएगा, इसी लिए मैंने किसी से नहीं कहा। अपना मन मारे रही।"

"नहीं-नहीं, तुम पूरी बात बताओ, हम डॉक्टर हैं, शायद कुछ समझ सकें।"

"तो बाबू! सच्ची बात यह है कि मेरा एक दूध का पूत था...!"

"दूध का पूत?" डॉक्टर, नर्स और कम्पाउन्डर सब ने दोहराया।

"हाँ बाबू! दूध का पूत। देखो...देखो...आह! ...दर्द बढ़ गया डॉक्टर साहब...!"

घोसन बेहोश होने लगी। डॉक्टर ने एक कम्पाउन्डर को कुछ इशारा किया। वह झट एक इंजेक्शन ले आया। डॉक्टर ने इंजेक्शन लगाया। घोसन को होश आ गया। उसने बताया–

"हुजूर ! पच्चीस बरस हुए, जब मेरा पहला बच्चा पैदा हुआ था। उसके चौथे रोज़ मेरे एक परदेसी पड़ोसी के घर लड़का हुआ, लेकिन दो घण्टे के बाद उसकी माँ उसे ज़िन्दा छोड़कर मर गई। उस बच्चे को मैंने अपने बच्चे के साथ पाल लिया था, यही

है मेरा "दूध का पूत", न जाने कहाँ है मेरा लाल। आह!" घोसन ने फिर छाती पर हाथ रखा।

"अच्छा माई! लो, यह गोली मुँह में डाल लो। दिल को मज़बूत करके पूरा हाल कह डालो, हम तुम्हारे मर्ज़ को कुछ-कुछ समझने लगे हैं।"

घोसन ने छोटी-सी सुर्ख़ गोली मुँह में रख ली और पानी के साथ निगल गई। फिर बोली—

"फिर मेरा दूध का पूत जब पाँच साल का हुआ तो उसका बाप उसे लेकर अपने घर चला गया। बस उसी दिन से एक हूक के साथ इस दूध में दर्द शुरू हुआ। अन्दर-ही-अन्दर मुझे तो ऐसा लग रहा है कि जैसे मेरी सारी छाती सड़ गई है और अब यह हाल है।"

"बस करो माई! मैं समझ गया तुमको असूल तकलीफ़ क्या है? मगर देखो, ख़ून चढ़ाए बग़ैर तुम्हारे घाव का ऑपरेशन नहीं हो सकता...।"

"सुनो तो बाबू! ख़ून देनेवाले को तो बड़ा दुख होता होगा?"

"दुख का हाल तो मुझे नहीं मालूम, हाँ, तकलीफ़ उसे बहुत होती है। दो बोतल ख़ून देना कोई खेल तो है नहीं। बदन में रह क्या जाएगा फिर?"

"तो फिर रहने दो बेटा। मैं किसी की जान लेकर अपनी जान नहीं बचाना चाहती।"

"माई! तुम समझती नहीं। कोई मरता नहीं है ख़ून देकर। हाँ, कमज़ोर हो जाता है ख़ून दे के, अगर उसे अच्छा खाना मिले, फल-फूलारी मिलें तो महीने-डेढ़ महीने में फिर हट्ठा-कट्ठा हो जाता है।"

"पर इतना ख़ून देगा कौन?"

"जिसे रुपए की ज़रूरत होगी।"

"कितने रुपयों की?"

"ख़ून देनेवाला जो माँगे।"

डॉक्टर से यह सुनकर घोसन अपने शौहर का मुँह तकने लगी। गुलाब घोसी ने अपने थैले से नोटों की गड्डी निकाली और डॉक्टर के क़दमों में डाल दी।

"लो बाबू! इसमें से ख़ून की क़ीमत ले लो।"

और वह कभी डॉक्टर को, कभी नर्स को और कभी किसी कम्पाउन्डर को बारी-बारी से देखने लगा।

अजीब हाल था उस वक़्त। डॉक्टर चुप खड़ा कुछ सोच रहा था, कम्पाउन्डर और नर्सें सब एक-दूसरे को देख रहे थे। अभी कुछ ही लम्हे गुज़रे थे कि एक नौजवान कम्पाउन्डर ख़ून देने के लिए तैयार हो गया। लेकिन उसने ख़ून की क़ीमत पाँच सौ रुपए माँगी।

पाँच सौ रुपये की रक़म के नाम पर गुलाब घोसी हँसा, बड़े तीखेपन से बोला, "हाँ, जैसा सुना था, वैसा ही पाया। शहरवाले पैसे लिए बग़ैर कोई बात ही नहीं समझते।"

उसने नोटों की गड्डी में से पाँच सौ गिन दिए, बाक़ी अपने थैले में रख लिए। डॉक्टर ने कम्पाउन्डर के ख़ून की जाँच की। "बहुत ठीक है।" उसकी ज़बान से निकला और फिर उसके जिस्म से ख़ून लेकर घोसन के जिस्म में पहुँचा दिया। उसके बाद तीसरे दिन घोसन का ऑपरेशन हुआ। डॉक्टर ख़ुशी के मारे फड़क उठा। बहुत ही कामयाब ऑपरेशन हुआ था। गुलाब घोसी ने उस मौक़े पर नर्सों, कम्पाउन्डरों और दूसरे कर्मचारियों तक को ख़ुश कर दिया। लेकिन उस कम्पाउन्डर को उसने एक पैसा तक न दिया, जिसने ख़ून के बदले पाँच सौ रुपए लिए थे और वह देता ही क्यों? वह कम्पाउन्डर ख़ून देने के बाद इस लायक़ ही कब रह गया था कि घोसन की ख़िदमत कर सकता। उसने यह भी ज़ाहिर नहीं होने दिया कि उसे बख़्शिश

मिलनी चाहिए। ऑपरेशन के दस-बारह दिन के बाद कम्पाउन्डर की ड्यूटी फिर लग गई। लेकिन अब उसकी ड्यूटी यह थी कि वह घोसन के पास स्टूल पर बैठा रहे, लेकिन चल-फिर कर काम न करे।

कम्पाउन्डर बड़ा बातूनी था। वह घोसन के पास बैठकर इस क़द्र बातें करता और ऐसी बातें करता कि सुननेवाले सुना करते। घोसन ने उसे अब तक मुँह नहीं लगाया था। लेकिन वह भी उसकी बातों में दिलचस्पी लेने लगी और फिर और कई दिन बीते और जब उसने यह देखा कि अब वही ख़ुदग़र्ज़ कम्पाउन्डर उसकी बड़ी देख-भाल कर रहा है तो उसका ग़ुस्सा जाता रहा। फिर जब वह बिलकुल अच्छी हो गई और फिर जब गुलाब घोसी ने सबको बख़्शिश दी तो घोसन ने उस कम्पाउन्डर को भी इनाम दिलाया। इस मौक़े पर ख़ुदगर्ज़ कम्पाउन्डर ने फिर एक बचकानी हरकत की। गुलाब घोसी उसे दो रुपए देने लगा तो उसने कहा, "मैं तो पाँच रुपए से कम न लूँगा।"

"अच्छा! अच्छा! ले, मैं तुझे पाँच रुपए दूँगी, बड़ा लालची है तू!" घोसन ने उसे पाँच रुपए दिलाए। उसके बाद जब वह अस्पताल से डिस्चार्ज हुई, घर जाने लगी तो वह लालची उसे स्टेशन पर आकर मिला। सलाम किया और कहने लगा, "माँ! अब तो जा रही हो, कुछ और दो।"

गुलाब घोसी को बहुत बुरा लगा लेकिन घोसन ने कहा, "एक रुपया दे दो इसे।" एक रुपया लेकर कम्पाउन्डर ने सलाम किया और गाड़ी छूटने तक डिब्बे के पास खड़ा रहा। जब गाड़ी छूटी तो लौटा।

गुलाब घोसी अपनी घोसन को लेकर जब घर पहुँचा तो उसके नाम एक हज़ार रुपए का बीमा आया और एक ख़त भी। ख़त में लिखा था—

"अम्मी जान और अब्बा जान! अस्सलामु-अलैकुम व रहमतुल्लाहि व बरकातुहू। अल्लाह तआला की आप दोनों पर दोनों जहाँ की सलामती और रहमत हो।

उम्मीद है कि आप दोनों बख़ैरियत घर पहुँच गए होंगे। बीस बरस के बाद आप दोनों बुज़ुर्गों को देखकर मुझे कितनी ख़ुशी हुई, यह मैं लफ़्ज़ों में बयान नहीं कर सकता। फिर सबसे बड़ी बात यह कि मैं आपके साथ एक महीने से ज़्यादा रहा और ज़्यादा वक़्त आपके पास गुज़ारा, लेकिन मैंने अपने को आप पर ज़ाहिर नहीं किया। अगर मैं बता देता कि मैं ही आपका "दूध का पूत" हूँ तो अचानक आप पर दौरा पड़ जाता, फिर आपका जीना मुश्किल होता। मुझे अन्देशा था कि आपका हार्ट-फ़ेल हो जाएगा।

फिर जब ख़ून देने का मौक़ा आया तो दिल यही कह रहा था कि ख़ून के बदले रक़म न लूँ। फिर मैंने सोचा कि न लेने की वजह पूछी जाएगी। उस वक़्त कहीं मुँह से निकल जाता कि, "क्या दूध का पूत भी बदला ले ले" तो आप मुझे पहचान लेतीं और बेसब्री में न जाने क्या करतीं। अपने से दूर रखने के लिए मैंने बड़ी बचकाना हरकतें कीं। लड़-झगड़कर आप से बार-बार इनाम लिया, फिर स्टेशन पर जा घेरा। प्यारे अब्बा! मेरा अन्दाज़ा है कि अम्मी जान के मर्ज़ में आपका एक हज़ार रुपए ज़रूर ख़र्च हुआ होगा। इस एक हज़ार का ख़र्च करना आपके बेटे पर फ़र्ज़ था, क्योंकि आपका बेटा आजकल कम्पाउन्डर है और उस महकमे से ताल्लुक़ रखता है, जिसके लिए मशहूर है कि वहाँ मुफ़्त इलाज होता है।

देखिए, मैंने जिस डर से अपने को ज़ाहिर नहीं होने दिया, वह एक तो यह था कि आप पर ख़ुशी में दौरा न पड़ जाए। दूसरी बात यह थी कि मैं अपनी अम्मी का मिज़ाज जानता हूँ, वे अगर जान जातीं कि उनका बेटा ख़ून दे रहा है तो वे हरगिज़ तैयार न होतीं और अब यह डर है कि कहीं आप अपने दूध के पूत का बीमा वापस न कर दें। अगर आप रक़म वसूल कर लेंगी तो मैं एक महीने के अन्दर-ही-अन्दर क़दम-बोसी को हाज़िर हो जाऊँगा। मैंने छुट्टी की दरख़ास्त दे रखी है और अपने डॉक्टर को पूरी कहानी सुना दी है। उम्मीद है कि दरख़ास्त मंजूर हो जाएगी। और देखिए अगर आपने बीमा वापस कर दिया तो मैं हरगिज़ नहीं आऊँगा। नतीजा यह

होगा कि आप तड़प-तड़पकर फिर उसी मर्ज़ में मुब्तिला हो जाएँगी, फिर आप का इलाज न हो सकेगा। याद रहे कि आख़िर मैं भी तो आप ही के ख़ून से पला हूँ।

वस्सलाम।

मेरे भाई-बहनों को मेरा सलाम कह दीजिएगा।"

फ़क़त आपका दूध का पूत

नादिर कम्पाउन्डर, बरेली

नीयत का फल

बहुत दिनों की बात है, किसी शहर में एक बाग़बान रहता था। उसका एक बाग़ था। उसके बाग़ में हर तरह के पेड़-पौधे थे। फलों के भी पौधे और फूलों के भी। बाग़बान बड़ा ईमानदार था। हमेशा ख़ुदा से डरता रहता। ख़ुदा के हुक्मों के मुताबिक़ ज़िन्दगी बसर करता, नमाज़ पढ़ता, ज़कात देता। जब बाग़ में फ़सल आती तो पैदावार में से ख़ैरात भी करता। ग़रीबों और यतीमों को ढूँढ-ढूँढकर देता। वह ज़मीनवालों पर रहम करता, अल्लाह उस पर रहम करता। अल्लाह के फ़ज़्लो-करम से उसके बाग़ में हमेशा बड़ी बहार रहती। हर मौसम में उसके बाग़ में फल-फूल आते रहते। फ़सल पर फलों से लदी डालियाँ ज़मीन को छूती रहतीं। लोग देखते तो कहते कि इतना अच्छा बाग़ न देखा, न सुना। बाग़बान भी ख़ुश था। बाग़ को हरा-भरा और फलों-फूलों से लदा देखकर अल्लाह का शुक्र अदा करता रहता। वह ख़ुश क्यों न होता, उसके पास ख़ुदा के फ़ज़्ल से बड़ी नेमत थी। इतना अच्छा बाग़ था। बाग़ की देखभाल करके उसकी पैदावार से साल भर खाता। अल्लाह ने उसे पाँच जवान बेटे भी दिए थे। ये सब लड़के बाप का हाथ बँटाते, उसका कहना मानते। बाप बेटों से ख़ुश था और बेटे बाप से ख़ुश, सचमुच यह बड़ी नेमत थी। फिर लोग भी बाग़बान की बड़ी इज़्ज़त करते। ग़रीबों की मदद करते देखते तो ग़रीब तो दुआएँ देते ही दूसरे लोग भी दुआएँ देते।

इस तरह दिन गुज़रते रहे। फिर वह वक़्त भी आया जब बाग़बान बूढ़ा हो गया। बुढ़ापे में बीमारियाँ भी सताने लगीं। जब उसे यक़ीन हो गया कि अब मौत का वक़्त क़रीब आ गया तो एक दिन उसने अपने बेटों को पास बुलाया। उनसे कहा, "देखो!

मैं अब इतना कमज़ोर और बूढ़ा हो गया हूँ कि अब ज़्यादा दिन ज़िन्दा नहीं रह सकता। बहुत जल्द इस दुनिया से जानेवाला हूँ।"

बाप से यह सुना तो बेटे रोने लगे। फिर बोले, "अब्बा जान! आप जल्द ही अच्छे हो जाएँगे।"

बूढ़े बाग़बान ने बेटों को दिलासा देते हुए कहा, "प्यारे बच्चो! अब मेरा आख़िरी वक़्त है, कुछ नहीं कहा जा सकता कि किस वक़्त यह साँस आना जाना बन्द हो जाए। मैं चाहता हूँ कि मेरे बाद तुमको कोई दुख न हो। तुम सब हमेशा सुख से रहो। मैं मरने से पहले तुमसे कुछ कहना चाहता हूँ, ध्यान से सुनो–

तुम देखते हो कि मेरे बाग़ में उस वक़्त भी बहार रहती है, जब दूसरों के बाग़ सूखे पड़े रहते हैं। मेरा बाग़ दूर-दूर तक मशहूर है, क्या तुम बता सकते हो कि मेरे बाग़ की यह हरियाली और उसकी यह बहार क्यों है?"

बाप ने बातें करते-करते बेटों से सवाल कर दिया। एक बेटे ने जवाब दिया, "अब्बा जान! आप उसमें पानी ख़ूब देते हैं।"

दूसरे ने कहा, "आप उसमें खाद अच्छी से अच्छी देते हैं।"

तीसरा बोला, "आप निराई वक़्त पर करते हैं।"

चौथे बेटे ने सोचकर कहा, "और आप अच्छे-से-अच्छा बीज बोते हैं और बाग़ की ज़मीन भी अच्छी है। इसलिए पैदावार ख़ूब होती है। जब बाग़ फल-फूल देता है तो आप कीड़े-मकोड़ों से बचाते हैं, चिड़ियों के भगाने का भी इन्तिज़ाम है, यही वजह है कि बाग़ में सदा रौनक़ रहती है।"

बाग़बान का एक बेटा जिसका नाम आक़िल था, चुप था। वह किसी बड़ी फ़िक्र में था। बाप ने उससे कहा, "बेटा! तुमने कुछ नहीं कहा। क्या सोच रहे हो, तुम भी कुछ कहो मैं भी तो जानूँ तुम क्या सोचते हो।"

इस तरह बाप ने पूछा तो उस बेटे ने कहा, "अब्बा जान! मेरे भाइयों ने जो कुछ कहा है, उसमें शक नहीं कि किसी बाग़ को हरा-भरा रखने के लिए यह सब करना चाहिए, लेकिन इन तदबीरों से बढ़कर एक बात और है। मेरा ख़याल है कि आप हर वक़्त ख़ुदा से डरते रहते हैं। आप अल्लाह का हक़ बाग़ से निकालते हैं। अल्लाह के बन्दों का हक़ निकालते हैं। ज़मीनवालों पर रहम करते हैं। इसी लिए आसमानवाला आप पर मेहरबान है। आपके बाग़ की बहार, आपकी ईमानदारी की वजह से है। ख़ुदा की नज़र सीधी है, इसी लिए यह हरियाली है। जब तक ख़ुदा ख़ुश रहेगा, बाग़ में यह रौनक़ रहेगी। जब ख़ुदा नाराज़ हो जाएगा, इस बाग़ की रौनक़ छीन लेगा। सब कुछ उसी के बस में है और आप हर वक़्त उससे दुआ करते रहते हैं। मैं समझता हूँ कि बाग़ की फ़सल और पैदावार सब अल्लाह के फ़ज़्लो-करम ही से है। आप पर उसकी बड़ी रहमत है।"

वह लड़का यह कहकर ख़ामोश हो गया। बूढ़ा और बीमार बाग़बान अपने इस बेटे की बातों से बहुत ख़ुश हुआ, कहने लगा, "ठीक! कहते हो तुम। मैंने किसी का हक़ मारने की कभी कोशिश नहीं की, किसी फ़क़ीर को अपने दरवाज़े से ख़ाली हाथ वापस नहीं किया। साल-के-साल ज़कात निकालता रहा। तुम जानते हो कि फ़सल अगर क़ुदरती पानी पाकर पैदावार देती है तो उसकी ज़कात दसवाँ हिस्सा निकाली जाती है और अगर माली या बाग़बान ख़ुद नालियाँ बनाकर और मेहनत करके पानी लाता और सींचता है तो पैदावार का बीसवाँ हिस्सा ज़कात दी जाती है। मैं अल्लाह के इस हुक्म पर हमेशा अमल करता हूँ। अलग से सदक़ा और ख़ैरात भी करता हूँ। इसी लिए अल्लाह मुझपर मेहरबान है। यह सब उसकी मेहरबानी है कि हम सब चैन से ज़िन्दगी बसर कर रहे हैं। अल्लाह ने मुझे दौलत भी दी और इज़्ज़त भी।"

बेटों ने सुना। सबने इक़रार किया कि "सुचमुच यही वजह है कि आप का बाग़ हरा-भरा है।"

"अच्छा..." बाग़बान फिर कहने लगा, "तो देखो, मेरे मरने के बाद तुम

ज़कात देते रहना, अलग से ख़ैरात भी करना, अल्लाह चाहेगा तो बाग़ में इसी तरह बहार आती रहेगी। देखो बच्चो! ऐसा न हो कि तुम लालच में पड़ जाओ। ज़कात देना और सदक़ा, ख़ैरात करना बन्द कर दो और अपने उसी ख़ुदा को, जिसने यह नेमत दी है, नाराज़ कर लो, तो फिर वह अपनी नेमत वापस ले ले। तुम सब हमेशा अल्लाह के अज़ाब से डरते रहना।"

"पाँचों बेटों ने एक साथ कहा, "हम आपको यक़ीन दिलाते हैं कि अल्लाह के फ़ज़्ल से हम बिलकुल आपकी तरह ज़कात देंगे, कभी किसी का हक़ मारने की कोशिश न करेंगे, अल्लाह ने चाहा तो उसकी दी हुई यह नेमत सदा हमारे पास रहेगी।"

"शाबाश प्यारे बेटो, शाबाश!" बूढ़े बाग़बान ने ख़ुशी ज़ाहिर की, फिर मुस्कुराते हुए बोला, "मुझे तुमसे यही उम्मीद थी अब मैं बड़े इत्मीनान से इस दुनिया से जाऊँगा। ख़ुदा का शुक्र है कि उसने बड़े सुख से मुझे रखा। मैं मरते वक़्त भी ख़ुश हूँ कि मैं इस वक़्त भी मुसलमान हूँ और अपने बच्चों को इस्लाम पर देख रहा हूँ। देखो तुमने जो कुछ कहा है, उसपर जमे रहना।"

इसके बाद बूढ़े बाग़बान की मौत हो गई। घरवालों को तो दुख हुआ ही, दूसरों को भी दुख हुआ। यतीम बच्चे, बेवा औरतें, ग़रीब और अपाहिज लोग फूट-फूटकर रोए। सबने बाग़बान के लिए दुआ की कि अल्लाह उसको अपने अज़ाब से बचाए और जन्नत में जगह दे।

दिन बीते, महीने गुज़रे। फ़सलें तैयार होने को आईं। बेटे बाग़ को देखने गए। बाग़ फलों से लदा हुआ था। इस साल फ़सल सदा से अच्छी आई थी। वे ख़ुशी के मारे फूले न समाए।

एक ने कहा, "इस साल कैसी अच्छी फ़सल आई है। अब्बा जान की ज़िन्दगी में ऐसी फ़सल कभी नहीं हुई थी।"

दूसरा बोला, "इसमें क्या शक है, देखो न! मालूम होता है कि अब शाख़ें टूट ही पड़ेंगी फलों के बोझ से कितनी झुकी हुई हैं।"

तीसरे ने कहा, "अगर इस वक़्त अब्बा जान ज़िन्दा होते तो कितने ख़ुश होते।"

चौथा कहने लगा, "मगर उनकी क़िस्मत ही में न था कि ऐसी अच्छी फ़सल देखते।"

फिर एक ने कहा, "सुनो तो भाइयो! इसका तो बीसवाँ हिस्सा भी बहुत होगा। ज़कात में ढेरों पैदावार निकल जाएगी।"

दूसरा सोच में पड़कर बोला, "और भाई, फिर फ़क़ीर और ग़रीब लोग आएँगे, उनको देने में बहुत कुछ निकल जाएगा। यह भी तो सोचो।"

तीसरा बोला, "हम उन्हें कुछ न देंगे।"

चौथे ने उसकी हाँ में हाँ मिलाई। मगर मंझला भाई सबकी सुन रहा था और अभी तक चुप था। अब वह बोला, "भाइयो! क्या आप लोग अपनी वह बात और वादा भूल गए जो अब्बा जान की मौत के वक़्त उनके सामने किया था। आप सबने इक़रार किया था कि हम सब आप की तरह अल्लाह और अल्लाह के बन्दों का हक़ निकालते रहेंगे।"

मंझले भाई की यह बात दूसरे भाइयों को पसन्द न आई। एक भाई झुंझलाकर बोला, "तुमको वादे की पड़ी है और यह नहीं देखते कि पैदावार का बहुत बड़ा हिस्सा इसी तरह देने में निकल जाएगा। अगर उसको हम अपने पास रखेंगे तो कितना फ़ायदा होगा और कितनी बचत होगी।"

यह सुनकर दूसरे ने कहा, "हाँ, ठीक तो कहते हो। पहले घर में चिराग़ जलाया जाता है फिर मस्जिद में, पहले हमारा अपना हक़ है फिर दूसरों का।"

"जी, हक़-वक़ कैसा?" तीसरा भाई बोल उठा, "क्या दूसरों ने आकर हमारे बाग़

में पानी दिया था, या निराई की थी, या उसकी देख-भाल में वक़्त लगाया था? जब इनमें से कोई बात नहीं की तो हक़ कैसा? हक़ तो उसका होता है जो काम करे। अच्छा रहा यह हक़ भी, हम तो कुछ नहीं देते।"

अब तो चौथा तेज़ होकर बोला, "अजी, यह हक़-वक़ सब गई-गुज़री बातें हैं, ज़माना देखो किधर जा रहा है। हवा का रुख़ भी देखना चाहिए।"

मंझले भाई ने कहा, "अब्बा जान ने यह भी कहा था कि अगर अल्लाह और उसके बन्दों का हक़ न निकालोगे तो अल्लाह का अज़ाब आ जाएगा। अल्लाह के अज़ाब से हर वक़्त डरते रहना।"

"अजी मियाँ जी!" एक भाई हाथ का इशारा करके बोला, "आजकल अज़ाब को कौन मानता है। अब तो फ़सल तैयार है, अब अज़ाब आकर भी क्या करेगा। हम आज ही फ़सल काट लेते हैं।"

"तुम ठीक कहते हो।" मंझले भाई के अलावा सब भाइयों के मुँह से निकला। फिर सबने मशविरा करके तय किया कि दिन में फ़सल काटेंगे तो फ़कीर आ जाएँगे और परेशान करेंगे। अब्बा जान ने सबको बहुत सर चढ़ा रखा था। उन्हें मुँह लगाकर उनका दिमाग़ ख़राब कर दिया। ज़्यादा अच्छा है कि आज रात में चलकर फ़सल काट लें और कानों-कान क़िसी को ख़बर भी न हो। अगर कल दिन में कोई आए भी तो उससे कह देंगे कि अबकी बार फ़सल चोर काट ले गए।

"तो क्या इतनी-सी बात के लिए आप सब झूठ बोल देंगे?" मंझले भाई के इस सवाल पर सबने कह दिया कि "दो बोल निकाल देने में क्या हर्ज है। हमारा कितना माल बच जाएगा।"

उन भाइयों पर शैतान का दाव चल गया। वे मंझले भाई के समझाने पर भी न समझ सके। उनकी नीयत ख़राब हो गई। वे ज़रा-से लालच में झूठ बोलने के लिए तैयार हो गए। वे सब सोच रहे थे कि अब फ़सल तैयार है। अब क्या है, अब उसे

नुक़सान कैसे पहुँच सकता है? लेकिन यह उनकी भूल थी। शैतान ने उनकी मत मार दी थी। उन्हें याद न रहा था कि अल्लाह सबसे बड़ा है, वह हर वक़्त सब कुछ कर सकता है। मंझले भाई ने याद भी दिलाया मगर वे सब लालच के मारे अन्धे हो रहे थे। उनकी समझ में आता कैसे?

फिर तो हुआ यह कि अल्लाह के हुक्म से उस बाग़ पर बिजली गिरी और इस ज़ोर से गिरी कि सारा बाग़ जलकर राख हो गया। अब बाग़ की जगह राख का एक ढेर था या फिर कुछ ठुन्ठ यानी सूखे पेड़ खड़े थे।

सूरज छुपते ही सब भाई टोकरे, बोरे और फ़सल काटने का सामान लेकर बैल गाड़ियों पर चले। वे ख़ुश थे कि रातों-रात फ़सल काटकर गाड़ियों में भरलेंगे और

सबसे छुपाकर घर में रख लेंगे। लेकिन उन्हें क्या मालूम कि ख़ुदा का अज़ाब आ चुका जहाँ कुछ देर पहले बहार-ही-बहार थी, अब कुछ भी नहीं रहा। वे ख़ुश-ख़ुश बाग़ तक पहुँचे। लेकिन जब वहाँ बाग़-वाग़ दिखाई न दिया तो ताज्जुब के साथ बोले—

"अरे हमारा बाग़ क्या हुआ?" सब इधर-उधर हक्का-बक्का होकर देखने लगे। फिर देखा। फिर देखा। आँखें फाड़-फाड़कर देखा। उन्हें कहीं भी बाग़ नज़र न आया। आख़िर एक भाई ने कहा, "हम ख़्वाब तो नहीं देख रहे हैं।"

दूसरे ने कहा, "ऐसा तो नहीं कि हम रास्ता भूलकर दूसरी तरफ़ आ गए हों।"

मंझले भाई ने इधर-उधर देखते हुए कहा, "मगर भाइयो! मैं जगह पहचानता हूँ। जगह वही है। ये देखो, सीधे हाथ को वही पहाड़ी है जिस पर हम सब बचपन में खेला करते थे।"

अब तो सबकी समझ में आ गया। उन्होंने ग़ौर से देखा। पूरा बाग़ जला पड़ा था। सब "हाय-हाय" करने लगे।

"हाय-हाय! हम लुट गए, हमारी उम्मीदों पर पानी फिर गया। अब हम क्या खाएँगे।"

चारों भाई इस तरह "हाय-हाय" कर रहे थे। कोई अपनी तक़दीर को कोसता, कोई बिजली को और कोई आसमान को। अपनी भूल पर किसी का ख़याल नहीं जा रहा था।

आख़िर मंझले भाई ने कहा, "यह सब हमारा, आपका ही किया-धरा है। मैं तो कहता था कि ख़ुदा से डरो। तुम्हारी समझ में उस वक़्त कुछ न आया। आख़िर ख़ुदा का अज़ाब आ ही गया। यह सब नतीजा है ख़ुदा को भूल जाने का।"

यह सुनकर एक भाई बोला, "हमें इसकी क्या ख़बर थी। हमें तो बड़े भाई ने

लालच दिया, नहीं तो मैं वही करता जो अब्बा जान से वादा किया था।"

अब इसी तरह सब कहने और आपस में लड़ने लगे। सबको एक-दूसरे पर इलज़ाम धरते देखा तो मंझले भाई ने फिर समझाया, "अब आपस में लड़ने से कुछ हाथ नहीं आएगा। इस तरह बाग़ की फ़सल वापस नहीं आएगी बल्कि और परेशानी बढ़ेगी। मेरी मानो, तुम सब तौबा करो। अल्लाह से माफ़ी माँगो, फिर से मेहनत करो। अल्लाह बड़ा मेहरबान है, वह चाहे तो इससे अच्छी फ़सल दे सकता है।"

अब सबने मंझले भाई की बात पर कान धरे, ध्यान से सुना। अब सबकी आँखें खुलीं। सबने तौबा की, अल्लाह के हुज़ूर में गिड़गिड़ाए। दूसरे ही दिन से सबने फिर से मेहनत शुरू कर दी। पौधे लगाने लगे। खाद और पानी देने लगे। निराई करते जाते और अल्लाह से दुआ भी करते जाते।

अल्लाह ने उनकी तौबा क़बूल कर ली। नया बाग़ फिर लग गया। नई फ़सल आई। इस बार हमेशा से अच्छी फ़सल आई। सब भाई खुश हो गए। उन्होंने खुदा का शुक्र अदा किया। फिर जब पैदावार लेकर आए तो ज़कात भी निकाली, अलग से सदक़ा और ख़ैरात किया। ग़रीबों को ख़ूब बाँटा। अल्लाह का फ़ज़्ल हुआ। बाग़ फिर फल देने लगा।

✦·✦·✦

अच्छे बच्चों का स्कूल

नाम तो उस स्कूल का था "अच्छे बच्चों का स्कूल", लेकिन उसमें वही लड़के आकर दाख़िल होते थे, जिनका दाख़िला शहर के किसी स्कूल में नहीं होता था। बहुत से ऐसे लड़के भी उस स्कूल में दाख़िल थे, जो अपनी शरारतों की वजह से दूसरे स्कूलों से निकाल दिए गए थे। इन शरारती लड़कों के अलावा जो लड़के थे वे बहुत ही कम अक़्ल थे, यानी समझ के भी कोरे और पढ़ने में दिल न लगानेवाले।

आप सोचते होंगे कि उस स्कूल में ऐसे ही लड़के क्यों आते थे। समझदार और अच्छे लड़के क्यों नहीं आते थे? इसकी वजह यह थी कि उसमें वे किताबें नहीं पढ़ाई जाती थीं, जो सरकारी स्कूलों में पढ़ाई जाती थीं। लोग यह समझते थे कि उस स्कूल में बच्चे को भेजकर क्या फ़ायदा, अगर उस स्कूल से लड़के ने शुरुआती तालीम पूरी कर ली तो वह सरकारी स्कूलों में दाख़िल न हो सकेगा, बस इसी ख़याल से लोग अपने ज़हीन और अच्छे बच्चों को सरकारी स्कूलों में भेजते थे। सरकारी स्कूलों में भेजने से उनके सामने यह फ़ायदा था कि वह सरकारी इम्तिहानों में शामिल हो सकेगा। सनद पाएगा। कहीं-न-कहीं नौकरी मिल जाएगी।

हालाँकि सब लोग जानते हैं कि आजकल नौकरी में बरकत नहीं। नौकर और मुलाज़िम लोग दिन-रात अपनी कम तनख़ाहों को रोया करते हैं या फिर रिश्वत लेकर हराम कमाई खाते हैं।

यह बताने के बाद हम यह भी बता दें कि "अच्छे बच्चों का स्कूल" खुला कैसे? बात यह हुई कि इसके हेडमास्टर सिद्दीक़ी साहब पहले एक सरकारी स्कूल में टीचर थे। सरकारी स्कूलों में उन्होंने बीस साल काम किया, उसके बाद या तो वे ख़ुद वहाँ

से हट गए या हटा दिए गए।

सरकारी स्कूलों से हटने के बाद सिद्दीक़ी साहब ने ट्यूशन करना शुरू कर दिया। वे ट्यूशन की फ़ीस कम लेते लेकिन बच्चों को बड़ी मेहनत से पढ़ाते थे। पहले साल जिन बच्चों को उन्होंने ट्यूशन के तौर पर पढ़ाया वे सालाना इम्तिहान में बड़े अच्छे नम्बरों से पास हुए। दूसरे साल सिद्दीक़ी साहब के ट्यूशनों की तादाद इतनी बढ़ गई कि कोई वक़्त उनके पास ख़ाली नहीं रहता था। दिन में वे लड़के उनके पास पढ़ते, जो अभी किसी स्कूल में दाख़िल नहीं हुए थे। स्कूल के वक़्त के बाद स्कूल के लड़के ट्यूशन पढ़ते।

तीसरे साल उनकी इतनी शोहरत हो गई कि हर शख़्स उनसे अपने बच्चों को पढ़ाने की ख़ाहिश करने लगा। यह देखकर सिद्दीक़ी साहब ने एक मकान किराए पर लिया और अब घरों पर जाने के बजाए उस किराए के मकान में ट्यूशन पढ़ाना शुरू कर दिया। उस मकान में ट्यूशन पढ़ने इतने बच्चे आने लगे कि सिद्दीक़ी साहब को दो मास्टर और रखने पड़े।

इस तरह पढ़ाई हो रही थी कि एक दिन एक बुढ़िया एक लड़के को सिद्दीक़ी साहब के पास लाई, कहने लगी, "यह मेरा पोता है, इसके माँ-बाप मर चुके हैं। अब यह मेरे पास ही रहता है, मैंने इसे शहर के क़रीब-क़रीब सभी स्कूलों में पढ़ने भेजा, लेकिन यह इतना शरारती है कि हर स्कूल से निकाला गया। अब कोई इसे अपने स्कूल में दाख़िला नहीं देता है। मैं इसे आपके पास लाई हूँ। आप इसे दाख़िल कर लें। शायद यहाँ कुछ पढ़ सके।"

सिद्दीक़ी साहब ने उस लड़के को अपने यहाँ पढ़ने की इजाज़त दे दी। उस लड़के का नाम जलाल था। जलाल जिस दिन से यहाँ पढ़ने आने लगा, उसी दिन से चोरियाँ शुरू हो गईं। किसी लड़के का क़लम ग़ायब तो किसी की किताब। किसी के पैसे चोरी हुए तो किसी की कॉपी गुम हो गई। जलाल के आने से पहले ऐसी बातें सिद्दीक़ी साहब के बच्चों में नहीं पाई गई थीं। इसी लिए सबने समझ लिया कि चोर

कौन है।

जलाल पहले तो चोरियाँ करता रहा। मास्टर उसे समझाते रहे। वह झूठ बोलकर चोरी करने से इनकार करता रहा। फिर एक क़दम उसने और बढ़ाया, वह बच्चों से बात-बेबात झगड़ा करने लगा। कभी किसी के लँगड़ी लगा दी और बेचारा लड़का गिर पड़ा, कभी किसी लड़के को पीट दिया। जलाल की इन बातों से सिद्दीक़ी साहब के शागिर्द आने से घबराने लगे। उन बच्चों ने अपने घरवालों से वजह भी बताई। एक दिन कुछ बच्चों के घरवाले सिद्दीक़ी साहब के पास आए और बोले, "आपके यहाँ सब अच्छे बच्चे ही ट्यूशन पढ़ते थे, लेकिन जब से जलाल आया है, वह सबको मारता और चोरी भी करता है। हमें ख़ैर अपने नुक़सान की ज़्यादा फ़िक्र नहीं है लेकिन डर यह है कि जलाल की देखा-देखी हमारे बच्चों में भी यह बुरी आदतें पैदा न हो जाएँ। इसी लिए आप जलाल को निकाल दें, नहीं तो हम अपने बच्चों को नहीं भेजेंगे। वे दूसरे स्कूलों में पढ़ते ही हैं।"

सिद्दीक़ी साहब ने उन लोगों को जवाब दिया कि, "जलाल जैसे बुरे लड़के कहाँ जाएँ। क्या उन्हें आवारा और बदमाश बनने के लिए छोड़ दिया जाए। फिर जब बड़े हों तो हमारे ही घरों को लूटें और हमारे समाज पर एक धब्बा बनकर रहें। मैं जलाल को नहीं निकाल सकता। अच्छे बच्चे तो हर स्कूल में दाख़िला ले ही सकते हैं। बात तो जब है कि बुरे बच्चों को अच्छा बनाया जाए। जब से जलाल की शिकायतें मेरे पास आई हैं, तब से मैं यही सोचता हूँ कि मैं एक ऐसा स्कूल खोलूँ जिसमें वही बच्चे आएँ जो किसी स्कूल में दाख़िला न पाएँ या किसी स्कूल से निकाल दिए जाएँ।"

"तो फिर आप स्कूल का नाम रखिएगा 'बुरे बच्चों का स्कूल।" उनमें से एक शख़्स ने जलकर कहा। लेकिन सिद्दीक़ी साहब ने जवाब दिया, "नहीं नाम तो उसका होगा, अच्छे बच्चों का स्कूल।"

सब लोग उठकर चले गए और ये कहते हुए गए कि, "मालूम होता है कि सिद्दीक़ी साहब अब सठिया गए हैं।"

अब सब लोगों ने अपने बच्चों को स्कूल भेजना बन्द कर दिया। इसके बाद और बहुत-से दूसरे बच्चे भी ग़ैर-हाज़िर होने लगे। इस तरह घटते-घटते सिद्दीक़ी साहब के शागिर्दों की तादाद इतनी रह गई कि उनके लिए तीन मास्टरों की ज़रूरत नहीं थी, बल्कि एक मास्टर के लिए जितनी तादाद लड़कों की होनी चाहिए उससे भी कम रह गई। यानी यही कोई पन्द्रह-बीस शागिर्द।

जलाल की हरकतें अब भी बन्द नहीं हुई थीं। उसे जितना समझाया जाता, वह उतना ही बुरा बनता जाता। सिद्दीक़ी साहब ने दो टीचर जो और रखे थे वे भी बैठ रहे और अब सिर्फ़ सिद्दीक़ी साहब ही रह गए।

सिद्दीक़ी साहब जलाल को रोज़ समझाते लेकिन उसपर असर न होता। बेचारे सोचते रहते कि किस तरह उसे सुधारा जाए। सिद्दीक़ी साहब जलाल को सुधारने के लिए अल्लाह से दुआ भी करते थे, लेकिन अभी दुआ का भी कोई नतीजा न निकला था।

उन्हीं दिनों एक दिन जलाल की दादी लाठी टेकती सिद्दीक़ी साहब के पास आई और कहने लगी, "जलाल से मालूम हुआ कि आप के यहाँ बच्चों की तादाद बहुत कम हो गई है और इसकी वजह शायद जलाल की बुरी आदतें हैं। मैंने जलाल से वजह पूछी थी। वह शरारती मुस्कराकर एक तरफ़ चला गया। मैंने उसे बहुत बुरा-भला कहा। इसके बाद अब मैं आपकी ख़िदमत में इसलिए आई हूँ कि जलाल को वापस ले जाऊँ। मैं नहीं चाहती कि एक लड़के की नालायक़ी से बहुत-से बच्चों का नुक़सान हो और आप की रोज़ी भी जाए।" बुढ़िया यह कहकर सिद्दीक़ी साहब की तरफ़ देखने लगी।

सिद्दीक़ी साहब सर झुकाए हुए बुढ़िया की बातें सुनते रहे। बुढ़िया के ख़ामोश होने पर वे कुछ देर सोचते ही रहे। उसके बाद सर उठाकर बुढ़िया से कुछ कहना चाहा तो उन्होंने कमरे के बाहर दरवाज़े की चिक की एक तरफ़ जलाल की झलक देखी। जलाल ने बाहर खड़े-खड़े वे सारी बातें सुन ली थीं। अब उसने सिद्दीक़ी साहब

का जवाब सुनने के लिए कान लगा दिए। सिद्दीक़ी साहब ने बुढ़िया से कहा, "देखो बड़ी बी! मैं जलाल की तरफ़ से नाउम्मीद नहीं हूँ। उसकी आदतें तो बुरी हैं, लेकिन मेरा ख़याल है कि अगर उसके साथ नरमी बरती जाए और अच्छी किताबें पढ़ाई जाएँ तो वह नेक बन सकता है।"

"नेक बन सकता है!" जलाल ने दरवाज़े पर खड़े-खड़े सुना। उसे याद आया, अब तक सबने यही कहा था कि जलाल आवारा है वह नेक नहीं बन सकता। उसकी दादी भी उसे बदमाश ही कहकर पुकारती थी। "ओ बदमाश! जा यह कर। अरे नालायक़! तुझसे यह नहीं होता, वह नहीं होता।" वग़ैरा।

जलाल का जी चाहा कि वह कमरे में जाकर सिद्दीक़ी साहब से कहे कि वह कैसे नेक बन सकता है। लेकिन वह कुछ सोचकर खड़ा रहा। वह पूरा जवाब सुनना

चाहता था।

सिद्दीक़ी साहब कह रहे थे, "बड़ी बी! अच्छे लड़कों को तो सभी पढ़ाना पसन्द करते हैं, लेकिन कोई उन बेचारों का भी तो हो जिनकी आदतें बुरी हैं।"

जलाल ने यह सुना तो अबकी बार उसने चिक से झाँकना चाहा। लेकिन उसने इस ख़याल से नहीं झाँका कि सिद्दीक़ी साहब देख लेंगे। जबकि सिद्दीक़ी साहब उसको देख चुके थे। वे बुढ़िया से कह रहे थे, "देखो बड़ी बी! मैंने तय कर लिया है कि जलाल को आपका पोता समझकर नहीं बल्कि अल्लाह की अमानत समझकर सुधारने की कोशिश करूँगा। मुझे उम्मीद है कि अल्लाह मेरी मेहनत को बेकार न जाने देगा। मेरा ख़याल है कि अगर जलाल नेक बन गया तो यह समझें कि बहुत-से बुरे बच्चे नेक बन जाएँगे।"

"यह किस तरह?" दरवाज़े पर खड़े हुए जलाल की ज़बान से अचानक निकल गया। उसकी आवाज़ सिद्दीक़ी साहब और उसकी दादी ने भी सुनी। दोनों दरवाज़े की तरफ़ देखने लगे। सिद्दीक़ी साहब ने कहा, "आओ बेटा जलाल! बाहर क्यों खड़े हो, अन्दर आ जाओ। देखो तुम्हारी दादी तुमको लेने आई हैं। इनका इरादा है कि अब तुमको हमारे पास न पढ़ाएँ।"

सिद्दीक़ी साहब के बुलाने पर वह कमरे के अन्दर आ गया। सिद्दीक़ी साहब को सलाम करके सामने सर झुकाकर खड़ा हो गया। दोनों ने पहली बार उसे सर झुकाकर खड़े होते देखा।

सिद्दीक़ी साहब ने कहा, "बेटा जलाल! मैंने तुम्हारी दादी से कह दिया है कि मैं जलाल को ज़रूर पढ़ाऊँगा। वह पढ़-लिखकर नेक बनेगा। क्यों बेटा! तुम पढ़ोगे हमारे पास?"

"जी!" पहली बार उसकी दादी ने सुना कि उसने पढ़ने के लिए "हाँ" की। वह डाँटने लगी, "नालायक़! तू क्या पढ़ेगा! चोर, बदमाश, शैतान, तू तो पक्का शैतान

बनेगा। पढ़ेगा क्या ख़ाक? चल मेरे साथ। तेरी वजह से सिद्दीक़ी साहब के शागिर्द अपने घर बैठ गए। अब क्या तू चाहता है कि सिद्दीक़ी साहब भूखें मर जाएँ और सिर्फ़ तुझे ही पढ़ाते रहें।"

"नहीं दादी!" जलाल ने कहा। उसकी आवाज़ में नरमी थी और आँखों में आँसू भी। उसने कहा, "दादी! मैं ज़रूर पढ़ूँगा। मुझे तो तुम सब नालायक़, बदमाश और शैतान कहते थे। किसी ने नहीं बताया कि मैं भी नेक बन सकता हूँ। दादी! अब में पढ़ूँगा, नेक बनूँगा। मैं आप से वादा करता हूँ कि मैं ज़रूर पढ़ूँगा। आप मुझे यहाँ से न ले जाएँ।"

"झूठा कहीं का!" दादी ने फिर डाँटा।

"नहीं दादी मैं अब तक तो झूठ बोलता रहा, लेकिन अब मैं सच कहता हूँ मैं पढ़ूँगा। मैं नेक बनूँगा।"

बुढ़िया कुछ और कहना चाहती थी, लेकिन सिद्दीक़ी साहब ने रोक दिया और फिर उन्होंने उठकर जलाल को गले से लगा लिया। जलाल पर उस वक़्त कुछ ऐसा जादू हो गया था कि वह सिद्दीक़ी साहब के गले लगकर रोने लगा।

दूसरे दिन लोगों ने देखा कि जलाल उन सब लड़कों के घर गया, जो सिद्दीक़ी साहब का स्कूल छोड़ चुके थे। जलाल उनसे मिलता और क़समें खाकर यक़ीन दिलाता कि ख़ुद पढ़ेगा और दूसरों को भी पढ़ने देगा।

कहते हैं कि उसके बाद सिद्दीक़ी साहब के पास इतने लड़के पढ़ने आने लगे कि पहले से दुगने हो गए। ये देखकर उन्होंने अपना एक स्कूल खोल दिया और उसका नाम रखा, "अच्छे बच्चों का स्कूल" हालाँकि उस स्कूल में अच्छे-बुरे सब तरह के बच्चे दाख़िल थे। हाँ, वे बच्चे इस स्कूल की तरफ़ रुख़ नहीं करते थे जिनको सरकारी स्कूलों में पढ़कर सनद लेना थी और सनद लेकर नौकरी करना थी।

✦✦✦

भूत और चुड़ैल

बहुत-से लोग जो कम-समझ होते हैं या वे अल्लाह के सिवा किसी दूसरे से भी डरते हैं, वे वहमी बातों में फँस जाते हैं। वहमी बातें वे होती हैं, जो होती कुछ हैं लेकिन लोग उन्हें कुछ और समझते हैं और उनकी वजह से बुरे अक़ीदों में फँस जाते हैं। ये बातें ज़्यादातर उन लोगों में पाई जाती हैं, जिनका ईमान कमज़ोर होता है। वहमी बातों में भूत और चुड़ैल दो चीज़ें ऐसी हैं जिनसे लोग डरते हैं। हालाँकि वे होती नहीं हैं और अगर कुछ दिखाई भी देता है तो उसकी असलियत कुछ और होती है। मिसाल के तौर पर हम एक वाक़िआ लिखते हैं—

एक शहर है कूफ़ा। यह कूफ़ा वही शहर है जो इमामे-आज़म अबू- हनीफ़ा (रहमतुल्लाहि अलैहि) का वतन था। इसी कूफ़ा में अदरा नाम का एक शख़्स रहता था। वह बहुत निडर और मज़बूत दिल का आदमी था। उसके ज़माने में कूफ़ा के एक उजड़े इलाक़े में एक आग दिखाई देती थी, जो कभी ऊँची हो जाती थी और कभी नीची हो जाती थी। लोग कहते कि यह भूत या चुड़ैल है और उससे डरने लगे।

एक रात अदरा किसी काम से घोड़े पर सवार होकर उसी तरफ़ जा रहा था। अदरा ख़ुद कहता है कि "मैंने एक स्याही और आग देखी। फिर वह जो कुछ नज़र आ रहा था लम्बा हो गया। मैं झिझका, मुझे भूत या चुड़ैलवाली बात याद आ गई, लेकिन मैंने दिल में कहा कि ये सब बेकार की बातें हैं। यह आदमी के सिवा और कुछ नहीं। मैंने अल्लाह को याद किया और उसके बाद नबी (सल्ल०) पर दुरूद भेजा और अपने घोड़े की लगाम सँभाल ली, फिर उसे ऐड़ लगाई और उसकी तरफ़ बढ़ा तो वह और ऊँची और लम्बी हो गई और उसकी रौशनी भी बढ़ गई। यह देखकर मेरा घोड़ा बिदका। मैंने उसको चाबुक मारा तो घोड़ा उसकी तरफ़ बढ़ा और क़रीब पहुँच गया। उसने अगली दोनों टाँगें उसपर रख दीं। तो वह चीज़ छोटी होने लगी।

छोटी होते-होते आदमी के क़द के बराबर रह गई, और वह भागी। वह भागकर एक झुण्ड में गई। मैं घोड़े पर उसके पीछे लपका, नँगी तलवार मेरे हाथ में थी। मैंने उसे डाँटा, "ख़बरदार! रुक जा, नहीं तो तलवार का वार करता हूँ। वह चीज़ रुक गई, तो मैंने पकड़कर झुण्ड से बाहर खींचा। मैंने देखा कि वह एक काली औरत है।

मैंने उससे कहा, "सच-सच सारा हाल बता, नहीं तो तुझे क़त्ल कर डालूँगा।" उसने कहा, "मैंने तुझसे ज़्यादा निडर और मज़बूत-दिल आदमी नहीं देखा। मैं कूफ़ा के एक सरदार की बाँदी हूँ और यहाँ भाग आई हूँ। फिर मैंने सोचा कि कोई ऐसी तरकीब करनी चाहिए कि लोग मेरे पीछे न पड़ें। मैंने यह ढोंग रचा जो तुमने देखा। लोग मुझे भूत समझकर डरे और मेरे क़रीब न आ सके।"

औरत से यह सुनकर मैंने कहा, “यह है क्या जो ऊँची-नीची होती थी और रौशनी घटती-बढ़ती गई और वह आग कैसी थी जो मैंने देखी?”

काली औरत ने बताया, “मेरे पास काले रंग की एक बहुत लम्बी चादर है और कुछ छड़ियाँ हैं, जिनके सिरों पर लोहे की शामें लगी हुई हैं। मैं चादर के अन्दर से एक छड़ी में दूसरी छड़ी डालकर ऊँचा करती रहती हूँ, कम करने के लिए छड़ियाँ निकाल लेती हूँ, और आग जो तुमने देखी वह है मोमबत्ती। वह मेरे साथ होती है। मैं इसका सिर इतना निकालती हूँ जिससे चादर रौशन हो जाए।”

काली औरत ने मोमबत्ती चादर और छड़ियाँ वग़ैरा दिखाईं। फिर यह भी बताया कि “मैं बीस साल से यही तमाशा कर रही हूँ। तेरे सिवा आज तक किसी ने मेरा पीछा नहीं किया बल्कि हर एक डरकर भागा। भागने में उसका बहुत-सा सामान छूट गया। उसपर मैंने क़ब्ज़ा किया और आज तक यही करती रही।”

✦·✦·✦